दूसरे देशों का जनमत : विश्व मत और भारत की विदेश नीति
The Perceptions of Others: World Opinion and Indian Foreign Policy

रोहन मुखर्जी
Rohan Mukherjee
August 12, 2013

दूसरों की नज़र से अपने-आपको देखना आत्मनिरीक्षण के लिए बहुत ज़रूरी है. अगर हम इस बात का अध्ययन करते रहें कि दुनिया हमें किस नज़र से देखती है तो कोई भी देश अपनी विदेश नीति के मूल स्वर और प्रभाव के बारे में बहुत कुछ समझ सकता है. जनमत द्विपक्षीय संबंधों के मामले में प्रवृत्तियों को समझने के लिए विश्वसनीय संकेतक का काम करता है और विश्लेषक आम तौर पर किसी भी देश के आकर्षक बिंदुओं (सॉफ़्ट पावर) का आकलन दूसरे समाज की धारणाओं से करते हैं. इसलिए किसी भी देश की विदेशनीति की सफलता का अनुमान किसी और मानदंड से नहीं, बल्कि दूसरे देशों के जनमत के आधार पर अधिक बेहतर ढंग से किया जा सकता है.

मोटे तौर पर तीन आयाम हैं, जिनसे जनमत के सर्वेक्षण के आधार पर भारत का मूल्यांकन किया जाता हैः अंतर्राष्ट्रीय प्रभाव, घरेलू निष्पादन और नेतृत्व क्षमता. मौजूदा आँकड़ों से हमें एक महत्वपूर्ण द्विभाजन का संकेत मिलता है. एक ओर सरकारी वक्तव्यों और गैर-सरकारी विश्लेषण से पता चलता है कि अधिकांश राजनीतिज्ञ और विशेषज्ञ भारत को एक अच्छे खिलाड़ी, लोकतंत्र का प्रहरी और आर्थिक विकास का प्रतीक मानते हैं और साथ ही उसे विश्व नेतृत्व के लिए प्रमुख प्रत्याशी भी समझते हैं. दूसरी ओर, दुनिया-भर के लोग भारत को लेकर कतई उत्साही नहीं हैं और अक्सर उदीयमान भारत के प्रति उदासीनता का भाव रखते हैं. एक विद्वान् ने हाल ही में कहीं लिखा था, चीन की बढ़ती शक्ति के प्रति विश्व के लोग आशंकित रहते हैं और यही चीन की समस्या है, जबकि "भारत की समस्या है विश्व शक्ति के रूप में मान्यता पाने की, दुनिया भर के लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचने की और अपनी हैसियत बढ़ाने की. "

जहाँ तक अंतर्राष्ट्रीय प्रभाव की बात है, दुनिया के अधिकांश लोग भारत पर भरोसा नहीं कर पाते. इस साल 26,000 से अधिक लोगों के एक सर्वेक्षण में 34 प्रतिशत लोगों ने भारत के प्रभाव को अधिकांशतः सकारात्मक माना और 35 प्रतिशत लोगों ने नकारात्मक माना. शेष 31 प्रतिशत लोग तटस्थ रहे, वे इस बारे में कुछ नहीं जानते थे या फिर वे कहते थे कि यह स्थिति "कई बातों पर निर्भर करती है". अचरज की बात यह है कि भारत को लेकर नकारात्मक दृष्टिकोण रखने वाले लोग स्पेन, ऑस्ट्रेलिया, जर्मनी और कनाडा के थे. सब-सहारा अफ्रीका के लोग दुनिया में भारत के बढ़ते प्रभाव को लेकर सबसे अधिक आशावादी थे. कदाचित् इसका कारण यह है कि भारत द्वारा हाल ही में अफ्रीकी देशों को सहायता दी गयी थी और इन देशों में निवेश भी किया गया था. एशिया में इंडोनेशिया और जापान भारत के पक्ष में थे.

जहाँ तक भारत के घरेलू निष्पादन का संबंध है, दुनिया के अधिकांश देश भारत के घरेलू निष्पादन के बारे में कोई जानकारी नहीं रखते थे या फिर वे भारत की उपेक्षा कर रहे थे. 110 देशों में किये गये

गैलप पोल के अनुसार 44 प्रतिशत लोग भारत के नेतृत्व के रोज़गारपरक निष्पादन के बारे में कुछ नहीं जानते थे, जबकि 27 प्रतिशत लोग इसे स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थे. एक बार फिर इस बारे में स्वीकार करने वाले लोगों की दर सब-सहारा अफ्रीका में सबसे अधिक थी. इसके विपरीत, योरोप, अमरीका और पूर्व सोवियत संघ के अधिकांश प्रतिभागियों ने इस बारे में अपनी अनभिज्ञता प्रकट की. एशिया में एक बार फिर 2010 में किये गये गैलप पोल के अनुसार अफ़गानिस्तान, नेपाल, श्रीलंका और बंगला देश के लोगों ने भारत के नेतृत्व को आगे बढ़कर स्वीकार किया. पूर्व और दक्षिण-पूर्वेशिया के लोगों (इंडोनेशिया के सबसे अधिक 75 प्रतिशत लोगों) ने इस बारे में या तो मोटे तौर पर अपनी अनभिज्ञता प्रकट की या फिर कोई टिप्पणी करने से इंकार कर दिया. इस क्षेत्र में वियतनाम और जापान के साथ बढ़ते संबंधों के कारण केवल यही दो देश ऐसे थे जिनका मत घरेलू निष्पादन के संबंध में भारतीय नेतृत्व के संबंध में न तो विभाजित था और न ही उन्होंने इसे अस्वीकार किया था.

भावी वैश्विक या क्षेत्रीय नेतृत्व के संबंध में भी कुछ अलग-अलग देशों के भी सर्वेक्षण किये गये, जिसमें उदीयमान भारत की उज्ज्वल छवि कुछ धूमिल ही दिखायी पड़ी. सन् 2012 में वैश्विक मामलों से संबंधित शिकागो परिषद द्वारा कराये गये सर्वेक्षण में 10 में से केवल 2.6 औसत अमरीकियों ने भारत के प्रभाव के बारे में अपना मत प्रकट किया, जिससे यह पता चलता है कि सन् 2002 के बाद से इस मूल्यांकन में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है. जहाँ तक भारत के भावी प्रभाव का संबंध है, आम रेटिंग मामूली रूप में ही कुछ अधिक थी. भारत के बारे में विशेषज्ञों और आम आदमी के मत में विशेष तौर पर सन् 2012 में विदेश नीति पत्रिका द्वारा संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में स्थायी सदस्यता के लिए भारत की माँग को लेकर कराये गये संयुक्त राष्ट्र के विशेषज्ञों के सर्वेक्षण के आलोक में यह द्विभाजन स्पष्ट दिखायी पड़ता है. इस सर्वेक्षण में सबसे अधिक वोट 26 प्रतिशत भारत के पक्ष में डाले गये, उसके बाद नंबर था ब्राज़ील का, जिसके पक्ष में 11 % वोट डाले गये. सन् 2006 के विपरीत 42 प्रतिशत अमरीकी भारत को स्थायी सदस्यता देने के विरोध में थे. भारत के भावी नेतृत्व के बारे में एशियन मत भी पक्का नहीं है. सन् 2009 में जापान और चीन के किये गये सर्वेक्षण में प्रतिभागियों से पूछा गया था कि वे ऐसे दो देशों के नाम चुनें जिन्हें एशिया का भावी नेतृत्व सौंपा जा सकता था. जापान के केवल 16 प्रतिशत प्रतिभागियों ने और चीन के केवल 17 प्रतिशत प्रतिभागियों ने भारत को पहले या दूसरे विकल्प के बारे में चुना, जो न केवल उनके अपने देशों के लिए दिये गये मतदान से बहुत पीछे था, बल्कि एक-दूसरे से भी बहुत पीछे था.

भारत की विदेश नीति के बारे में किये गये इन सर्वेक्षणों से क्या निष्कर्ष निकलता है और हम भविष्य को लेकर इनसे क्या सीख ले सकते हैं? पहली बात तो यही है कि सत्ता की राजनीति का परिदृश्य ही राजनीतिज्ञों का परिदृश्य है और विश्व के अग्रणी देशों में भारत की अर्थव्यवस्था और सेना की रैंकिंग ही निर्णायक होती है. लेकिन जनमत सामाजिक पहलुओं से ही बनता है और इस दृष्टि से भारत की स्थिति बहुत अच्छी नहीं है. सन् 2002 में गुजरात के दंगों और सन् 2012 में दिल्ली में हुए सामूहिक बलात्कार ने भारत की लोकतांत्रिक छवि को दुनिया की नज़र में दागदार कर दिया था और सरकार की क्षमता पर भी प्रश्नचिह्न लगा दिये थे. जैसा कि कई लोग तर्क देते हैं कि यदि भारत को आगामी वर्षों में सॉफ़्ट पावर महाशक्ति बनना है तो उसे पहले अपनी सार्वजनिक संस्थाओं को सुधारना होगा. यदि स्पष्ट रूप में कहा जाए तो सन् 2011 में सॉफ़्ट पावर के रूप में

अर्थात् शासन, संस्कृति, कूटनीति, शिक्षा और कारोबार / नवोन्मेष के संबंध में गुणवत्ता के मिले-जुले सूचकांक के अनुसार भारत की रैंकिंग 27 वीं थी, जो रूस से थोड़ी सी ही ऊपर थी..

दूसरी बात यह है कि भारत की कूटनीति में क्षेत्रीय असंतुलन का डेटा पॉइंट क्या है. दक्षिण एशिया और सब-सहारा अफ्रीका के लोग पूरी तरह भारत के पक्ष में हैं, जबकि दक्षिण एशिया के नेताओं का नज़रिया काफ़ी अलग है, लेकिन भारत की सामाजिक जागरूकता और इसके प्रभाव का मूल्यांकन दुनिया के दूसरे हिस्सों में बहुत कम है. खास तौर पर पूर्व और दक्षिण पूर्वेशिया में भारत के प्रति जानकारी की बेहद कमी और भारी उदासीनता से पता चलता है कि चीन के सांस्कृतिक और सामाजिक व राजनैतिक प्रभाव के कारण दिल्ली की पूर्वोन्मुखी नीति का प्रभाव सीमित ही हुआ है. विश्व के देशों के बीच परस्पर घटते सैन्य संघर्षों की इस दुनिया में यदि महाशक्ति की प्रतिस्पर्धा को वैश्विक कल्पना को हथियाने का संघर्ष मान लिया जाए तो भारत की पहुँच बहुत कम है. यह कहना अनावश्यक है कि भारत की सार्वजनिक कूटनीति के लिए ज़रूरी है कि इसके भू-भौगोलिक जाल को नाटकीय रूप में फैलाने का प्रयास किया जाए.

जहाँ तक महाशक्तियों की आम जनता का संबंध है, भारत अभी तक इनके क्लब में प्रवेश भी नहीं पा सका है. सन् 2010 में अमरीकियों के मन में भारत के प्रति औसतन सद्भाव का मान यदि 100-पॉइंट रखा जाए तो उनका मान 53 था (जबकि ब्रिटेन का मान सबसे अधिक था अर्थात् 73 और उत्तर कोरिया और ईरान का मान सबसे कम था अर्थात् 27 प्रतिशत), जो 1978 से अब तक के 46 से 49 की सीमा तक के मान से कुछ ही अधिक था. ज़ाहिर है कि भारत के भाग्योदय के तीन दशक के बाद भी अमरीकी मन पर उसका कोई असर नहीं हुआ है. चीन में भारत के प्रति सावर्जनिक मत 2006 और 2012 के बीच 33 प्रतिशत से घटकर 23 प्रतिशत रह गया है. महाशक्तियों में जापान अकेला देश है जिसकी जनता के रुझान में भारत के प्रति लगातार वृद्धि हुई है. खास तौर पर जापान के साथ गहराते संबंधों के मद्देनज़र अमरीका से साथ संबंधों का स्तर बढ़ाने और चीन के साथ घाटे को कम करने के लिए ये प्रवृत्तियाँ भारतीय कूटनीति के लिए चुनौतियाँ भी हैं और अवसर भी.

अन्य देशों, विशेषकर महाशक्तियों के जनमत से भारत को उनकी घरेलू राजनीति से भी कुछ लाभ मिल सकता है, विशेषकर भारी संख्या में अल्पसंख्यकों के रुझान से भारत के प्रति उनका रुझान बढ़ सकता है और संकट काल में यही भारत के लिए लाभकारी हो सकता है. आज की कूटनीति सरकार द्वारा नामित चंद एजेंटों पर ही निर्भर नहीं है बल्कि इस पर अंतर-सामाजिक मतों और संवादों का भी असर होता है. भारत इस खेल में देरी से आया खिलाड़ी है और अपनी भारी सांस्कृतिक संपदा के बावजूद इसने अभी तक अपनी सॉफ़्ट पावर का इस्तेमाल करने की कला पर पूरी तरह से महारथ हासिल नहीं की है. पहले कदम के रूप में दिल्ली को भारत के प्रति अन्य देशों के मत पर अधिक ध्यान देने की ज़रूरत है.

रोहन मुखर्जी प्रिंसटन विश्वविद्यालय में राजनीति शास्त्र में पीएचडी के छात्र हैं.

हिंदी अनुवादः विजय कुमार मल्होत्रा, पूर्व निदेशक (राजभाषा), रेल मंत्रालय, भारत सरकार <malhotravk@hotmail.com>